बुद्ध की सकाय निरूत्तिया : छन्दस वनाम मागधी

सकाय निरुत्तिया बुद्ध की भाषा सम्बन्धी अनुजानना वाक्य है, जिसके द्वारा बुद्ध ने भविष्य में भाषा सम्बन्धी विवादों को समाप्त कर दिया। बुद्ध से लेकर बुद्धघोष तक सकाय निरुत्तिया का मतलव मागधी वोहरो से था।[1] उन्नीसवीं शताब्दी में पश्चिमी विद्वानों ने इसका अर्थ परम्परागत अर्थों से हटकर किया। ओल्डेन वर्ग[2] ने इसका अर्थ अपनी-अपनी भाषा में किया, पर आज बुद्धवचन एक ही भाषा मागधी में प्राप्त है। गायगर[3] के अनुवाद के आधार पर कुछ विद्वानों ने सकाय निरुत्तिया का अर्थ बुद्धवचन की भाषा में किया।[4] यहाँ प्रश्न है कि बुद्धवचन की भाषा क्या हो सकती है? प्रो0 रायस डेविडस[5] ने सकाय निरुत्तिया का अर्थ बुद्ध की मातृभाषा (कोशली) में किया पर पालि की समानता कोशली से नहीं बैठती है। ई0जे0 टॉमस[6] ने सकाय निरुत्तिया का अर्थ व्याकरण (गद्य) की भाषा में किया पर त्रिपिटक पद्य में भी प्राप्त है।

हमारा मत है कि आज तक विद्वान सकाय निरुत्तिया का सही अर्थ करने में असफल रहे हैं। इसका सीधा अर्थ है ''निज भाषा में या निज भाषा के द्वारा।'' इसका अभिप्राय यह कभी नहीं हो सकता कि बुद्ध ने अपने शिष्यों को अपनी-अपनी भाषाओं में उपदेश को सिखने की अनुमति दे दी थी। बुद्ध की भाषा सम्बन्धी अनुजानना वाक्य इस प्रकार है–''एतरहि भन्ते, भिक्खू नाना नामा नाना गोत्ता नाना जच्चा नाना कुला पब्बजिता, ते सकाय निरुत्तिया बुद्धवचन दूसेन्ति, हन्द, मयं भन्ते बुद्धवचनं छन्दसो आरोपेम'' ति... न भिक्खवे बुद्धवचनं छन्दसो आरोपेतब्बं, यो आरोपेय्य आपत्ति दुक्कटस्स, अनुजानामि भिक्खवे सकाय निरुत्तिया बुद्धवचनं परियापुणितु'' न्ति,–चूववग्ग

इन वाक्यों में अन्य विनय-नियमों के प्रज्ञापन की तरह ही संघ को सुचारू रूप से चलाने के लिए भिक्षुओं द्वारा उठाये गये भिक्षुओं की कमियों और उन

कमियों से होने वाले संघ के नुकसान तथा संघ की सतत् सुचारूता के लिए बुद्ध के द्वारा बनाये विनय-नियम बताये गये हैं। इन उद्धरण के मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं :–

1. यमेळ और तेकुलक का प्रश्न–नाना नाम, गोत्त, जाति कुल से प्रव्रजित भिक्षु अपनी–अपनी भाषा में बुद्धवचन को दूषित करते हैं।
2. यमेळ और तेकुलक का आग्रह–उस समय वैदिकों द्वारा प्रयुक्त छन्दस भाषा में बुद्धवचन सिखने की अनुमति मांगता है।
3. यमेळ और तेकुलक को बुद्ध का फटकार–बुद्ध ने द्वय ब्राह्मण-बन्धुओं को उनके छन्दस में बुद्धवचन सिखने के आग्रह पर फटकार लगाते हैं।
4. बुद्ध का अनुशासन – सकाय निरुत्तिया में बुद्धवचन सिखने की अनुमति देते हैं।

सकाय निरुत्तिया में बुद्धवचन सिखने की अनुमति देकर बुद्ध ने भविष्य में भाषा सम्बन्धी विवाद का निराकरण कर दिया। उन्नीसवीं शताब्दी तक मागधी को बुद्धवचन की भाषा मानते रहे। उन्नीसवीं शदी के पूर्वार्द्ध में पश्चिमी विद्वानों ने बुद्धवचन की भाषा का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन प्रारंभ किया। नाटकों में प्रयुक्त मागधी से पालि का तुलनात्मक अध्ययन किया। इस अध्ययन के आधार पर पालि को मागधी मानने से इनकार कर दिया। यह ध्यान रखना चाहिए कि नाटकों में प्रयुक्त मागधी कृत्रिम है, जनभाषा की मागधी नहीं है।[7] फलस्वरूप सकाय निरुत्तिया का अर्थ मागधी वोहारो से भटक गया।

यह सर्वसम्मति से स्वीकार किया जाता है कि महावीर और बुद्ध के समय में संस्कृत शिक्षित समुदाय की भाषा रह गयी थी, बल्कि यह कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगा कि संस्कृत कुछ शिक्षित ब्राह्मणों द्वारा ही समझी जाने वाली भाषा थी। परिणाम स्वरूप संस्कृत जन साधारण से दूर हो गयी थी। जन साधारण में एक नई भाषा पनप चुकी थी। बुद्ध ने उसी जनभाषा के माध्यम से अपना उपदेश दिया।[8] यह कहना गलत नहीं होगा कि मागधी ही जन भाषाओं में सबसे प्रमुख थी। भगवान बुद्ध का कार्यक्षेत्र मध्यमण्डल रहा है। उन्होंने मध्य मण्डल के सामान्य

सभ्यभाषा में ही अपने उपदेश दिये। इसी में उनके शिष्यों ने सिखा। यह निश्चित रूप से कह सकते हैं कि मागधी भाषा ही भगवान बुद्ध के उपदेशों का माध्यम थी और उसी में उनके शिष्यों ने बुद्धवचन सिखा और उपदेश किया। अशोक के शिलालेखों से इस बात की पुष्टि होती है कि भारत के उत्तरी-पश्चिमी छोर तक मागधी का प्रभाव था। विद्वानों ने इसे स्वीकार किया है कि मागधी अशोक के समय में राष्ट्रभाषा के रूप में आसीन थी।[9]

पाणिनि का अष्टध्यायी उस काल की भाषा का प्रामाणिक दस्तावेज है। पाणिनि ने छन्दस के साथ-साथ प्राकृत व्याकरण की भी रचना की थी। केदार भट्ट और मलय गिरि नामक विद्वान ने पाणिनि द्वारा रचित प्राकृत लक्षण नामक ग्रन्थ के कुछ उदाहरण की चर्चा जे0 एल्विस ने कच्चायन व्याकरण में किया हैं।[10] विद्वानों द्वारा पाणिनि का समय बुद्ध से थोड़ा पहले निर्धारित किया है। अष्टध्यायी में छन्दस और छन्दस से इतर भाषा का प्रामाणिक प्रयोग है। उस अंश से स्पष्ट है कि पाणिनि ने जनसामान्य द्वारा व्यवÉत भाषा को दो क्षेणियों में रखा हैं। अष्टध्यायी के महाभाष्यकार पतंजलि द्वारा गो शब्द का उदाहरण देकर गो को पाणिनीय प्रयोग और उसी के अन्य पर्याय गावी, गोणी, गोता, गोपतलिका को अपाणिनीय प्रयोग बताकर संस्कृत व्याकरण के शब्दरूपों में वर्जित कर दिया है। पतंजलि के समय भाषा सम्बन्धी विरोध स्पष्ट है, जिस विरोध का बीज बुद्ध और महावीर द्वारा जनभाषा में उपदेश करने की स्वीकृति से प्रारम्भ हो चुका था। बुद्ध और महावीर के बाद इस विरोध की पराकाष्ठा उस समय देखी जाती है जब मौर्य साम्राज्य का पतन और शुंगवंश की स्थापना के बाद पतंजलि और उनके अन्य पारम्परिक वैयाकरणों द्वारा अपाणिनीय प्रयोग को असुर और म्लेक्ष की भाषा कह दिया गया तथा इस भाषा प्रयोग से असुरों के पराजय का कारण बताया गया।[11]

सकाय निरुत्तिया–प्रसंगानुसार बुद्ध की सकाय निरुत्तिया की पृष्ठ भूमि को आधुनिक संदर्भ में समझना आवश्यक है। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में प्रायःउसी

समय जिस समय पश्चिमी विद्वान सकाय निरुत्तिया के अर्थ विनिश्चय में संलग्न थे। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन अपनी चरम सीमा पर था। लोग विदेशी सामानों का बहिष्कार कर रहे थे। स्वदेशी का नारा लगा रहे थे। राजनेता, कवि, लेखक अपने-अपने ढंग से स्वतंत्रता आंदोलन की धार दे रहे थें। भाषा के क्षेत्र में साहित्यिक मनिषियों ने निज भाषा का आंदोलन छेड़ रखा था। भाषा आंदोलन का मूल-मंत्र भारतेन्दु की इन पंक्तियों में द्रष्टव्य है :–

निज भाषा उन्नति लहै, सब उन्नति को मूल।

बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।।

इन पंक्तियों में निज भाषा कवि की मातृभाषा नहीं है बल्कि भारत में सम्पर्क भाषा के रूप में पनप चुकी हिन्दी के प्रति उनका आग्रह है। इन पंक्तियों का पालि अनुवाद इस प्रकार होगा–

सकनिरुत्तिया उन्नति लभे, सब्बानि उन्नानि मूल।

ञाणस्स सकनिरुत्तिया बिना, न मु×चते हदयस्स सूल।।

ठीक इसी प्रकार बुद्ध की सकाय निरुत्तिया उनकी अपनी मातृभाषा कोशली के प्रति आग्रह नहीं था बल्कि भिक्षुओं के लिए शख्त निर्देश था कि निज भाषा मागधी में बुद्धवचन सिखा जाये। इस प्रसंग को उपस्थापित करने का लक्ष्य यह है कि बुद्ध की सकाय निरुत्तिया और भारतेन्दु का निज भाषा एक ही उद्देश्य से कहा गया है। बुद्ध की सकाय निरुत्तिया मागधी के प्रति आग्रह था और भारतेन्दु की निज भाषा हिन्दी के प्रति आग्रह था। यहाँ निज भाषा का सांगोपांग अध्ययन आवश्यक है।

निज भाषा – अभिधान पदीपिका में सक के तीन पर्याय मिलते हैं, जो इस प्रकार हैं – निजो सको अत्तनियो।[13] सक के स्थान पर निज का व्यवहार प्रचलित था। सक की व्युत्पत्ति संस्कृत स्वक् से हुई है, जिसका आधुनिक रूप स्वयं है। स्वक् के दो रूप पालि शब्दकोश में उपलब्ध हैं–वो (तुम्हे = त्वं) और नो (अम्हाकं=वयं)। दोनों का अर्थ

निज है। निज सक का पर्याय है। व्याकरण में सक निजवाचक सर्वनाम है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से स्व से वो और नो से निज व्युत्पन्न है। वो और नो का प्रयोग पालि व्याकरण में उपलब्ध है। इस प्रकार सकाय निरुत्तिया का अर्थ निज भाषा में हुआ। भारतेन्दु की निज भाषा और बुद्ध की सकाय निरुत्तिया एक ही मकसद से कहा गया है। यह संयोग ही कहा जायगा कि बुद्धवचन में सकाय निरुत्तिया का प्रयोग हुआ है और भारतेन्दु ग्रन्थावलि में निज भाषा का। सक मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा का शब्द था। निज आधुनिक भारतीय आर्यभाषा का शब्द है। प्रयोग की दृष्टि से दोनों शब्द आत्मबोधक हैं। इस आधार पर सकाय निरुत्तिया का अर्थ ''निज भाषा में'' हुआ। वह निज भाषा बुद्ध के समय की सम्पर्क भाषा (Lingua Franca) मागधी थी। संस्कृत के शब्दकोश में निज भाषा के अनेक अर्थों में ''अपने दल या अपने देश का'' अर्थ भी मिलता है।[14] इस प्रकार बुद्ध का आदेश था–**''भिक्षुओं अपने देश की भाषा (स्वदेशी) में बुद्धवचन सिखने की अनुज्ञा देता हूँ।''** स्वदेशी भाषा मागधी थी और परदेशी भाषा छन्दस, जिसमें बुद्धवचन सिखने पर बुद्ध दुक्कट का दोष लगने की बात करते हैं। छन्दस जिसका स्थान निश्चित रूप से भारत के बाहर था, के विरूद्ध बुद्ध की अनुज्ञा थी। उच्चारण के साधारण नियमों के अनुसार परिवर्त्तन करने पर अवेस्ता और ऋग्वेद के रूप एक हो जाते हैं।[15]

यहाँ यह शंका किया जा सकता है कि बुद्ध का दृष्टिकोण इतना संकुचित नहीं हो सकता कि बुद्ध किसी एक भाषा में बुद्धवचन सिखने की अनुमति कर सकते हैं पर यह सत्य है कि बुद्ध वैदिकों के कर्मकाण्ड, बाह्याडम्बर और अंधविश्वास के खिलाफ श्रमणों के आन्दोलन की नई दिशा दे रहे थें, जिसका नेतृत्व बुद्ध से पहले महावीर कर चुके थें। यह प्रायोगिक सत्य (Applied Truth) है कि वैदिकों के साथ श्रमणों का विरोध था, जिसका संकेत पाणिनि के सूत्रों की व्याख्या करते हुए पतंजलि के द्वारा गो-व्याघ्र अहि-नकुल के साथ-साथ श्रमण-ब्राह्मण का प्रतिकुल सम्बन्ध द्वन्द्व समास के उदाहरण में उदाहृत किया हैं।[16] इसी प्रकार पाणिनि के सूत्रों की व्याख्या करते हुए, व्याकरण जानने के महत्त्व को समझाते हुए पतंजलि ने ''हेलयो हेलयो''

करते हुए असुरों को पराजित होने की बात की है। इसलिए ब्राह्मणों को भी म्लेक्षों (श्रमणों) की भाषा से बचने के लिए व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है।[17] यहाँ म्लेक्ष और असुर शब्द मूल भारतीयों के लिए प्रयुक्त है और उनके द्वारा व्यवÉत भाषा मागधी (पालि) जानने वालों की पराजय की बात कही गई है। ऋग्वेद से स्पष्ट है कि इन्द्र का विजय रथ सैन्धव प्रदेश में बढ़ रहा था। भारत के मूलवासी हेलयो हेलयो कर इन्द्र के आक्रमण के डर से भागते थे। हेलयो हे अर्यः का अशुद्ध उच्चारण था। इस अशुद्ध उच्चारण के कारण आर्यों द्वारा श्रमणों की पहचान की जाती थी और श्रमण मौत के घाट उतार दिये जाते थें। जिस प्रकार श्रमणों और ब्राह्मणों का विरोध जग जाहिर था, उसी प्रकार संस्कृत और मागधी का विरोध भी संस्कृत ग्रन्थों में स्पष्ट है। गो को साधु भाषा और गो के अन्य पर्याय गोणी, गोता, गोपतलिका को असाधु भाषा कहकर छन्दस और मागधी का विरोध दर्शाया गया है। भाषा-वैज्ञानिकों को बुद्ध के अनुज्ञा वाक्य सकाय निरुत्तिया के सम्बन्ध में प्रायोगिक अर्थ के और सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्वेषण की आवश्यकता है।

1. सकाय निरुत्तियाति एत्थ सकानिरुत्ति नाम सम्मासम्बुद्धेन वुत्तप्पकारो मागधिको वोहारो – समन्तपासादिका, चूकवग्गट्ठकथा पृ0– 57
2. सेकेरेट बुक्स ऑव ईस्ट भाग–XX पृ0–151 (1885)
3. पालि लिटरेचर एण्ड लैंगवेंज पृ0–7
4. द एज ऑव विनय पृ0– 139
5. पालि इग्लिश डिक्शनरी भूमिका भाग– पृष्ठ V
6. द लाइव ऑव बुद्धा पृ0–253–54
7. डॉ0 मुनिश्वर झा, मागधी एण्ड इट्स फॉर्मेशन, पृष्ठ–30 कलकत्ता 1967
8. वही, पृष्ठ–13
9. डॉ0 मुनिश्वर झा, मागधी एण्ड इट्स फार्मेशन, पृष्ठ–20–21, कलकत्ता 1967

10.पाणिनि भगवान प्राकृत लक्षणम्पि वक्ति संस्कृतादन्यत्–दीर्घाक्षर×च कुतरचिद् एकां मात्रा मुपैति इति–मागधी एण्ड इट्स फॉर्मेशन में उद्धृत, पृष्ठ–32

11. तेऽसुरा हेलयो हेलयो इति कुर्वन्तः पराबभवुः तस्माद् ब्राह्मणेन न म्लेच्छितवैः नापभाषितवैः म्लेच्छो ह वा एष यदऽपशब्दः तेऽसुरा। व्याकरण महाभाष्य पृष्ठ–6 चारूदेव शास्त्री, वाराणसी, 1962

12. भारतेन्दु ग्रन्थावलि भाग–2, पृष्ठ 731

13. अभिधान पदीपिका, गाथा संख्या–736

14.क) संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, मोनियर विलियम्स

ख) संस्कृत हिन्दी शब्द कोष, वामन शिवराम आपटे,

15. जैक्शन, अवेस्ता ग्रामर, पृष्ठ–21, भूमिका भाग,

16. पतंजलि महाभाष्य, 2.4.9

17. तेऽसुराः हेलयो हेलयो इति कुर्वन्तः पराबभबुः तस्माद् ब्राह्मणेन न म्लेच्छितवैः नापभाषितवैः।'' व्याकरण महाभाष्य, पृष्ठ 6 चारूदेव शास्त्री,